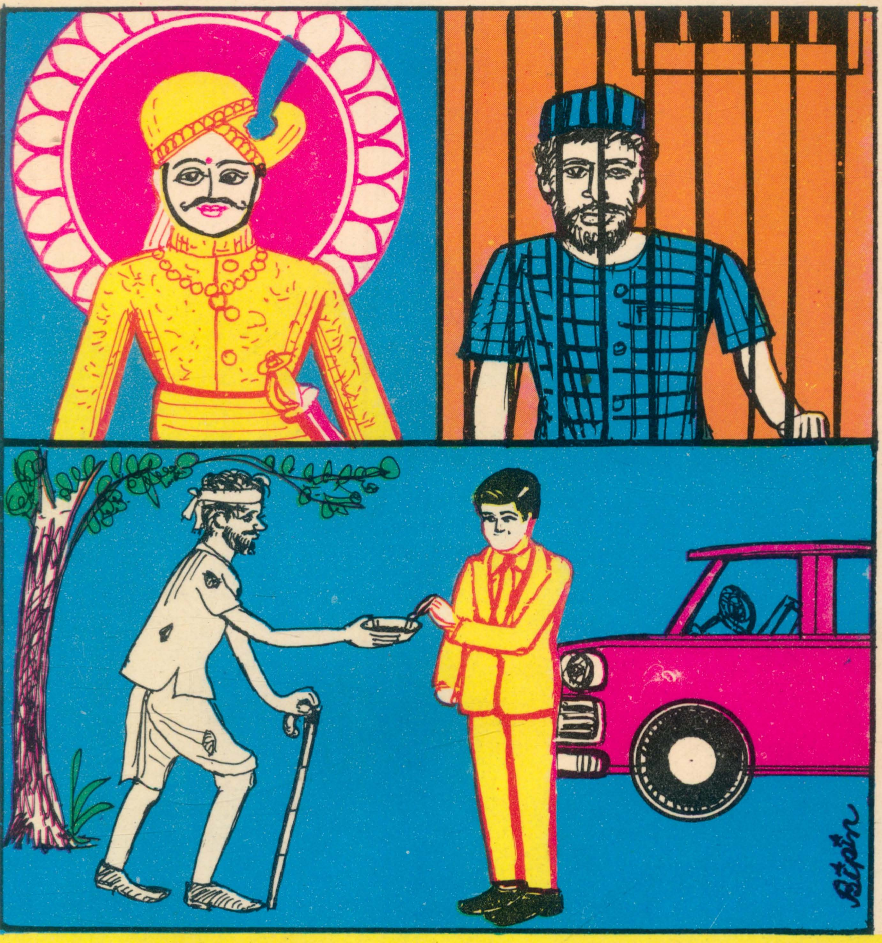

कर्मन की गति न्यारी

: प्रवचनकार : विद्वान्, चिंतक, प्रखर वक्ता

मुनिराज श्री यशोभद्र विजय जी म.

वल्लभ ग्रंथमाला

पुष्प–११

कर्मन की गति न्यारी

(सन् १९८५ में भीवंडी चातुर्मास में रविवार को दिये गए १० प्रवचनों में से एक स्मरणीय जाहेर प्रवचन)

सन् : १९८६ फरवरी प्रथम : संस्करण

प्रति : १००० मूल्य : ३ रुपये

प्रवचनकार

मुनि श्री यशोभद्रविजयजी महाराज

प्रकाशक

श्री विजयवल्लभ मिशन (रजि.) लुधियाना (पंजाब)
बम्बई (महाराष्ट्र)

प्राप्ति स्थान :

- मेघराज पुस्तक भंडार, गोडीजी की चाल, पायधुनी, **बम्बई.**
- श्री देसराज त्रिभुवनकुमार जैन, पुराना बाजार, **लुधियाना (पंजाब)**
- सोमचंद डी. शाह, जीवन निवास के सामने, **पालीतणा (सौराष्ट्र)**

मुनि श्री के द्वारा रचित तथा प्रकाशित १७ ग्रंथ

१.	संगीत मंजरी भाग–१	४–००
२.	संगीत मंजरी भाग–२	३–००
३.	जैन प्रश्नमाला (संपादित) (लेखक : मुनि श्री हेमचंद्रविजय जी) (जैन धर्म संबंधी ५०० प्रश्न तथा उनके उत्तर)	१५–००
४.	योगशास्त्र भाग–१ (प्रथम प्रकाश के ३३ श्लोकों का विवेचन)	२५–००
५.	जैन हस्तरेखा शास्त्र (विश्व स्तरीय ग्रंथ. १४०० चित्रों सहित)	८०–००
६,	१०० दुर्गुणों की चिकित्सा	३–००
७.	समाज की बेड़ियां कैसे टूटे	१८–००
८.	आशा औरन की क्या कीजे	३–००
९.	जागो ! स्वप्न झूठा है	३–००
१०.	मंजिल का राही	३–००
११.	शरणागतिः शांति का अमोघ उपाय	३–००
१२.	कर्मन की गति न्यारी	३–००
१३.	मानवः एक अनूठी कृति	३–००
१४.	आप भी महान बन सकते है	३–००
१५.	फूलों की शय्या : कांटों का पथ	३–००
१६.	मन की गंगा : कुछ निर्मल, कुछ कलुषित	३–००
१७.	जहर तो पीया जान बूझ कर	३–००

प्रकाशनीय ग्रंथ

१. शिविरोपयोगी निबंध अष्टक

२. संगीत मंजरी भाग–३

प्रकाशक – श्री वल्लभ मिशन, लुधियाना : बम्बई (रजि.)

● भारतीय संस्कृत भवन, माई हीरां गेट,
जालंधर (**पंजाब**)

● सेवंतीलाल वी. शाह, महाराजन गली,
जवेरी बाजार, **बम्बई**.

● मोतीलाल बनारसीदास, बेंग्लो रोड,
जवाहर नगर, **दिल्ली**.

● चोखंबा सुरभारती प्रकाशन *K, 37/117*
गोपाल मंदिर लेन, **वाराणसी** (**यू. पी.**)

● सरस्वती पुस्तक भंडार, हाथीखाना, रतनपोल,
अहमदाबाद (**गुजरात**)

मातुश्री केसीबाई पादरली की पुण्य स्मृति मे

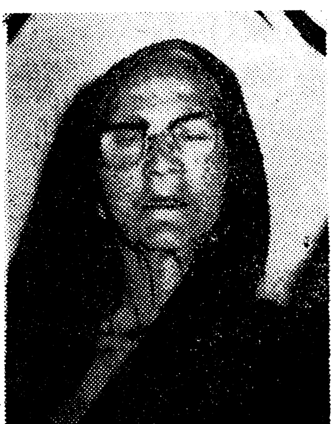

उनके सुपुत्र श्री बाबूलालजी सरदारमलजी, श्री फुटरमलजी की ओर से पुस्तक की प्रकाशन में आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ ।

प्रकाशक की ओर से ....

प्राचीन न्याय, दर्शन–अलंकार छंदस्–काव्यकोष–व्याकरणादि के प्रकाण्ड विद्वान् आगमाभ्यासी, चिन्तनशील, प्रतिभाशाली युवा मुनिराज श्री यशोभद्रविजयजी महाराज के चातुर्मासिक तथा जाहेर प्रवचनों से बम्बई की जैन–जेनेतर जनता ने विशाल संख्या में उपस्थित होकर लाभ उठाया। गोड़ीजी–बम्बई के प्रवचनों के प्रकाशन के रुप में योगशास्त्र विवेचन–भाग प्रथम आपके हाथों में आ चुका है।

भीवंडी में मुनि श्री के द्वारा चातुर्मास में विभिन्न रसप्रद विषयों पर तलस्पर्शी विवेचन के साथ जो जाहेर प्रवचन दिए गए उनके प्रकाशन की योजना को भीवंडी के दानवीरों के सहयोग से साकार रुप प्रदान किया जा रहा है।

इन १० प्रवचनों की १० पुस्तिकाओं के प्रकाशन के साथ ही मुनि श्री के १७ ग्रंथ प्रकाशित हो चुके है। जिनमें 'जैन हस्तरेखा शास्त्र' (विस्तृत विवरण, अध्ययन, शोध तथा १४०० चित्रों सहित) सदृश विशालकाय ग्रंथ भी सम्मिलित है।

मुनि श्री के प्रवचनों के प्रकाशन से तथा लेखन की विविधलक्षी प्रवृत्तियों से समाज लाभान्वित हो, इसी आशा के साथ–

कर्मन की गति न्यारी

प्रवचनकार : **मुनि श्री यशोभद्रविजयजी म.**

कर्मणो हि प्रधानत्वं कि कुर्वंति शुभाः ग्रहाः ।
वशिष्ठ दत्त लग्नोऽपि रामः प्रव्रजितो वने ॥

जब हम समस्त संसार पर दृष्टि पात करते हैं तो पाते हैं कि समस्त संसार पर कर्मों का ही अधिकार है । यथा–एक देश पर एक ही सम्राट् का शासन चल सकता है, तथैव समस्त प्रकृति-पर कर्मों का ही साम्राज्य चलता है । किन्हीं शुभाशुभ कर्मों से वायु चलती है तथा वातूल (तूफान) भी चलता हैं ! इन्हीं कर्मों से वर्षा–अवर्षा होती हैं। कर्मों से ही प्रलय आती हैं । यहां तक कि काल भी कर्माधीन है– अर्थात् मानव का अवस्थाओं का समय तथा मृत्यु का समय भी कर्मों के अधीन है । पंचम आरे के अंत में होने वाली प्रलय पर यदि प्रकृति का राज्य है तो उस प्रकृति-पर कर्मों का राज्य है । मानव के पाप कर्मों का भार बढ़ जाने से अर्थात् मानव के कर्मों के कारण ही प्रकृति कुपित होकर प्रलय, अतिवृष्टि, अनावृष्टि कराती है तथा पृथ्वी के पुण्य का भार बढ़ जाने पर प्रकृति भी प्रसन्न हो जाती है ।

जब मानव प्रथम आरों में सुखी थे – निःस्वार्थ या संतोषी थे, सरल थे, तब प्रकृति ने उन्हीं के पुण्यों से उन्हें कामधेनु कल्पवृक्ष आदि पदार्थों का दान दिया । वर्तमान में जबकि निःस्वार्थता, संतोष एवं सरलता आदि गुण धर्म अल्प होते जा रहे है, तब यह प्रकृति मानव पर क्यों न रूष्ट होकर भूकंप तथा प्रलय का कारण बनेगी ।

वर्तमान में भौतिकवाद में ही मानो मानव के कर्म की इति श्री है। मानव ने प्रकृति के अनेक विध कार्यों में हस्तक्षेप करके अनेक विपत्तियों के योग्य पाप कर्मों को बांधा है, कहीं वायुप्रदूषण है तो कहीं ध्वनिप्रदूषण, कहीं रसायनों का भंडार है तो कहीं हिंसा की प्रबलता। अर्थात् मानव स्वयं ही स्वकर्मों से प्रलय को निमन्त्रण दे रहा है। मानो भूत वश में तो हो गया परंतु सिर पर चढ़कर ही बैठ गया। आकाश भी निर्लोप न रह सका।

कहीं वनों का छेदन किया जा रहा है, कहीं मानव की मूल रक्षक संपत्ति–पर्वतों को तोड़ा जा रहा है कहीं जीने वालों को जब्रदस्ती मारा जा रहा है तो कहीं मरने वालों को जब्रदस्ती आक्सीजन एवं इंजेक्शन देकर शांति से मरने भी नहीं दिया जा रहा।

अर्थात् जब मानव क्रूर है, वह प्रकृतिगत स्वभाव का शत्रु है तो प्रकृति को मानव का मित्र बनने की क्या आवश्यकता है।

इससे यह प्रमाणित हो गया कि प्रकृति भी मानव के ही शुभाशुभ कर्मों के परिणाम से ही परिवर्तित होती है। जब मानव के कार्य अच्छे थे, तब वर्षा समय पर होती थी परंतु आज वर्षा का समय बदला, वर्षा के स्थल बदले तथा वर्षा का स्वभाव भी बदला।

आखिर मानव क्यों प्रकृति के विनाश पर तुला है ? प्रकृति के विनष्ट होने पर क्या वह स्वयं सुरक्षित रह पाएगा ? मानव का कर्तव्य है कि वह प्रकृति के साथ चले। जब प्रकृति मानव के

लिए पर्याप्त अन्न तथा दुग्ध का उत्पादन कर रहा है तो किसी जीव को मारकर खाने का पाप करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब न्यायनीति से उदरपूर्ति हो सकती है तो अन्याय से धन के पिटारे भरने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब प्रेम से जीवन जीया जा सकता है तो घृणा तथा द्वेष विकसित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब परंपरागत शस्त्र से युद्ध लड़ा जा सकता है तो आधुनिक शस्त्र विकसित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब प्रत्येक प्राणी को मरना ही है तो प्राणी जगत् को मारने के लिए न्यूट्रान बम बनाने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब सुख क्षणिक है तो उसे स्थायी करने के लिए पाप करने की को आवश्यकता नहीं है।

आखिर मांस, अधिक धन, अन्याय, द्वेष, शस्त्र बम तथा पाप मानव का उद्धार तो कर सकेंगे ना ! यदि नहीं तो उनका विकास करने की आवश्यकता क्या है।

याद रखना, जितना मानव ने अप्राकृतिक कर्म किया, उतना ही वह दुःखी हुआ है।

दुःख का कारण भी कर्म है, सुख का कारण भी कर्म है।

प्रत्येक मानव कर्मों की छाया तले सोया है। यदि संसार में कर्म न होता है, तो मानव मानव न होता, देवता देवता न होता। संसार का अस्तित्व इस प्रकार से दृष्टिगत न होता। कर्म का राज्य ऐसा राज्य है कि प्रत्येक व्यक्ति को इसी राज्य के अधीन रहकर जीवन यापन करना पड़ता है।

जब किसी मानव के साथ किसी प्रकार का भाग्य जुड़ जाता है। तब मानव को वैसा ही फल मिलना प्रारंभ हो जाताहै।

आज का प्रवचन का विषय है – कर्मन की गति न्यारी।

अर्थात् मानव अपने कर्मों को पढ़ नहीं सकता। मानव को उन्हें पढे बिना ही आगे बढ़ना होता है। हमें इस बात का कोई पता नहीं होता कि हमारे भविष्य में क्या लिखा है। पुरूषार्थ करने पर भी सफलता मिलेगी या नहीं। यह पता न होने पर भी हम आगे बढ़ते जाते हैं। परंतु जैसा हमारा भाग्य होता है, वैसी ही हमारी सफलता होती है तथा बुद्धि भी वैसी बनती चली जाती है। एक कवि ने कहा था –

" बुद्धि कर्मानुसारिणी "

अर्थात् बुद्धि भी कर्मानुसार होती है। जिस समय मानव का पतन होने वाला होता है– उसकी बूद्धि को बिगड़ते देर नहीं लगती। जब मानव का उत्थान होने वाला होता है तब उसकी बुद्धि सुधरते भी देर नहीं लगती।

जब रावण का पतन होते वाला था, तब उसने सीता का अपहरण कर लिया। उसकी बुद्धि तब उसी में स्वयं का लाभ देख रही थी, परिणामतः उसका पतन हो गया।

मानव जो कुछ भी करता है करता स्वंय के बलबूते पर है– स्वयं के आधार पर है परंतु आगे जाकर उसे क्या फल मिलेगा यह उसके अपने हाथ में नहीं होता। इसीलिए कृष्ण को गीता में कहना पड़ा –

"कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन ।"

अर्थात् हे अर्जुन! कर्म करना तेरा अधिकार है, फल में तेरा कोई अधिकार नहीं। तू पुरूषार्थ करके फल की इच्छा रखता है। अच्छे का फल अच्छा चाहता है, बुरे का फल बुरा ही बुद्धिगम्य होता है। इस बात का क्या विश्वास है कि तुझे अच्छे का फल अच्छा ही मिलेगा। पुरूषार्थ करता जा, फल की प्राप्ति में रोष तथा तोष मत कर। फल की इच्छा फलीभूत न हो तो मानव बेचैन हो जाता है, अपनी अशांति को दूर करने का यह विशेष उपाय है। पुरूषार्थ करने पर भी भाग्य में हो तो मिले, न हो तो न भी मिले।

राम के राज्याभिषेक का समय आ पहुँचा था। परंतु बाधाराक्षसी मध्य में आ खड़ी हुई। राज्याभिषेक में कुछ ही घंटों की देर थी कि कैकेयी ने सारा ही विषय विवादास्पद बना दिया।

कौशल्या माता का पावन आशीर्वाद लिया था कि मैं राजा बन जाऊँगा। समस्त अयोध्या की प्रजा राम को राजा के रूप में देखना चाहती थी परंतु भाग्य में कुछ और ही लिखा था।

मुहूर्त्त भी राज्याभिषेक होने का वशिष्ठ जी ने दिया था परंतु क्या राज्याभिषेक हो सका ?

मानव कर्म कैसे करता है तथा फल उसे कैसा मिलता है? किसके नसीब में क्या है ? कुछ नहीं कहा जा सकता।

'कर्मणो हि प्रधानत्वं' कर्म का राज्य सभी स्थानों पर है, वहां शुभग्रह भी क्या करेंगे। चौथे आरे में मुहूर्त्त देते हुए ऋषि ने कहा था कि इस मुहुर्त में यदि राम का अभिषेक होगा तो राम सदैव राजा बना रहेगा।

राज्य तिलक का समय आ पहुँचा इससे पूर्व ही कैकेयी माँ ने वर मांग लिया कि राम को वन में भेज दो, राम को बन में जाना पड़ा। यह सब तकदीर का चक्कर !

कहां राज्याभिषेक ! कहां वनवास! वनवास का वह शुभ मुहूर्त्त अच्छा। मुहुर्त रहा वह ? सीता अपहरण में राम को क्या-२ कष्ट नही भोगने पड़े।

हरिश्चंद्र सम्राट् को कर्म के कारण ही श्मशान घाट पर नौकरी करनी पड़ी। श्मशान घाट पर वे रक्षक बन कर रहे।

कर्म ने भ. महावीर को भी नहीं छोड़ा। भगवान् महावीर ने जो-जो कर्म पिछले जन्मों में किये थे उनका फल महावीर को अन्तिम-जन्म में चुकाना पड़ा। समस्या यह थी कि जो कर्म लाखों सागरोंपम की स्थिति में किये थे – उन सभी कर्मों को मात्र १२॥ वर्ष में ही खपाना पड़ा। क्योंकि उनको कैवल्य की प्राप्ति उसी जन्म में होने वाली थी। मानो कर्म महावीर को कष्ट देने के लिए अवसर की प्रतीक्षा में थे। सिर मुड़ाये एवं ओले पड़े।

महावीर ने कर्म भी बहुत किए तथा फल भी अत्यंत दुःख-दायी पाया। २३ तीर्थंकरो के कर्मों को मिला दिया जाए तो भी महावीर के एकाकी के दुःख-कर्म कहीं अधिक होते हैं।

भ. महावीर को ज्ञान था कि जो कर्म मैंने स्वयं किए हैं– उनका फल उन्हे स्वयं ही भोगना पडेगा। उसका फल कोई अन्य नहीं भोगेगा।

इन्द्र ने भ. महावीर को आकर कहा कि "हे प्रभो! आपको बहुत बडे –२ कष्ट आनेवाले हैं। मैं आपका सेवक आपकी आज्ञा से आपकी सेवा में रहू। आपके उपद्रव दूर से ही समाप्त कर दूंगा।"

महावीर ने कहा " इंद्र! तूं किस भ्रांति में है? तीर्थंकर कभी भी किसी की सहायता से केवलज्ञान को प्राप्त नहीं करते। तू मेरे कष्टों को क्या हटाएगा। वो कष्ट मेरे भाग्य में लिखे हैं वे मुझे ही भोगने है। उनका कोई उपाय नहीं। तूं कैसे मेरे कष्टों को समाप्त कर सकेगा।" इंद्र ने सब सुना।

फिर भी उसने भाववश एक सिद्धार्थ नाम का देव उनके चरणों में रख दिया। वह देवता भी उनके कष्ट समाप्त न कर सका।

संगम ने महावीर को कितने बड़े–२ कष्ट दिए। ग्वाले ने पैरों में खीर पकाई, ग्वाले ने कानों में कीले ठोके। परंतु संगम के दिए गए कष्ट तो समस्त भूमिकाओं से ऊपर हैं।

इसमें भी महावीर के ही कर्म कारण थे। यदि भ. महावीर के कर्म कारण न होते तो संगम महावीर को कष्ट देने न आता।

कर्म का रोग तो संसार के प्रत्येक जीव के साथ में है। जैसा जैसा जीव कर्म करता है, उसे वैसा वैसा फल मिलता

जाता है। कर्म के फल से भ. महावीर जैसे तीर्थंकर भी न बच सके तो मानव की क्या हैसियत है ? कर्म के आगे।

इसीलिए शास्त्रों ने कर्मसत्ता का गुण गान पद पद पर किया है। शास्त्र कहते है कि पहले कर्म को जानो तथा उसके फल की प्रक्रिया को ज्ञात करो। जिससे मानव कर्म करने से पीछे हटे।

मानव कर्म करता जाता है। तत् पश्चात् किसी भव में उसे कर्म का फल मिलता है। तब वह रोता है कि यह दु:ख क्यों मिला ?

आपने व्यापार किया। आपके भाग्य में बहुत धन कमाना लिखा है। प्रथम बार आपने व्यापार किया। उसमें पांच लाख *Invest* किया। जिसको माल दिया वह माल ही पचा गया। आपने सोचा "गये काम से। काम किया था, –असफलता मिली, बहुत फंसे"। यदि आपका भाग्य अच्छा होगा तो उसने यदि ५ लाख का माल खाया है। तो भी आपको हर मूल्य पर वह माल मिलेगा। इसमें संदेह नहीं।

यदि आपका भाग्य खराब है – आपने १० लाख रु. कहीं से लोन लेकर व्यापार किया। आपको १० लाख की हानि हो सकती है। तथा ५–७ लाख रु. का कर्ज भी आपके उपर चढ़ सकता है।

मानव को भाग्य का पता नहीं हो सकता ! मानव को व्यापार सर्विस करते हुए–ये जो *Crashes* आती है, यह जो

संकट का काल आता है वह सब स्वयं के भाग्य से ही आता है पूर्वजन्म में किसी की *Partnership* में आपने उसका धन पचा लिया होगा । आपने उसका कुछ न कुछ बुरा किया होगा । उसके साथ धोखा किया होगा । अतएव यहां अब हमारे साथ भी धोखा होता है । यदि मानव अच्छा हो तो कोई भी प्राणी धोखा नहीं दे सकता ।

एक व्यक्ति गरीब हो । उसके भाग्य में गरीबी लिखी हो-उसको अमीर कौन बना सकता है ।

राम चरित मानस में लिखा है –

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा ।

जो जस कर ही सो जस फल चाखा ।

समस्त संसार कर्म केअधीन है । जो व्यक्ति जैसा कर्म करता है उसे वैसा वैसा फलमिलता जाता है । इसमें किसी का दोष क्या है ? हम कई बार दूसरे को दोषी ठहराते हैं – "इसके कारण मेरा ऐसा हो गया । इसके कारण मेरा काम खराब हो गया ।"

सबसे पहले यह विचार करना चाहिये कि मेरे ही कर्म से काम खराब हुआ है । कर्म कारण भूत न होता तो हमें कोई भी व्यक्ति दुःखी नहीं कर सकता था/हमारा अहित–अकल्याण नहीं कर सकता था।

एक व्यक्ति था । वह चला जा रहा था । बेचारा गरीब होने के कारण बहुत परेशान था । सोचा "क्या मर जाऊं ! परन्तु मरने से समस्या *Sovel* न होगी । यह गरीबी कैसे कटे ?

उसने शिव शंकर के सामने बैठकर ध्यान किया। एक मास तक अविचलित रुप से ध्यान किया।

पार्वती शंकर से बोली–यह देखो। तुम्हारा भक्त तुम्हारी भक्ति कर रहा है। इसे कुछ वरदान दे दीजिये। इसका कल्याण कीजिये।" शंकर बोले "वरदान तो दे दूँ" परन्तु इसके नसीब में कुछ हो, तब ना। इस बेचारे के नसीब में कुछ भी नहीं है।"

"पार्वती बोली" नसीब में हो या न हो, तुम इसका कल्याण कर दो। भगवान् तो सर्व शक्तिमान होता है।"

जब नसीब में न हो तो भगवान् क्या कर सकता है? जैन जगत् में जगत् का कर्ता भगवान् नहीं माना। कर्म में कुछ न हो तो जगत् का कर्ता भी उसे सुखी नहीं करता। अतः जगत् का कर्ता मानने की कोई आवश्यकता नहीं है।

"शंकर भोले! इसे कुछ न कुछ दे दो"

"दे दूंगा, परन्तु इसके पास कुछ टिकने वाला नहीं है। इसने पूर्व जन्म में कोई अच्छा कर्म नहीं किया, मिलेगा कहां से इसे? यह भूखे मरने के लिये ही उत्पन्न हुआ है।"

"कुछ तो दे दो" पार्वती ने आग्रह किया। शंकर जैसा देव देने बैठे तो २–४ रुपये तो देगा नहीं। उसने चिन्तामणि रत्न दे दिया।

"यह चिन्ता मणि लेकर घर जा! इसे अपने सामने रखकर कुछ भी सोचना। प्रत्येक वस्तु मिल जायेगी।" शंकर बोले।

भक्त तो खुशी से नाच उठा। भक्त घर की ओर चल दिया। २–४ मील चला। यदि उसके नसीब में कुछ लिखा होता तो वह मांग लेता। कहीं भी जंगल में ही चिन्तामणि रत्न से घर परिवार धन की इच्छा करके सभी कुछ प्राप्त कर लेता। परन्तु इसके दिमाग में ऐसा विचार न आया। उसने सोचा कि घर जाकर बढ़िया मकान मागूंगा। मुझे तुरंत दस मंजिल का मकान मिल जायेगा। चितामणि या कामधेनु भी मिल जाए तब भी कुछ नहीं पाया जा सकता।

एक कवि ने कहा था –

पदे पदे निधानानि योजने रस कूपिका।

भाग्यहीना न पश्यन्ति, बहुरत्ना वसुंधरा ।।

पृथ्वी पर पग–पग पर धन के भण्डार है, योजन – योजन पर रस के कूप है जिससे स्वर्ण का निर्माण होता है, परन्तु भाग्य-हीन को कभी ये पदार्थ दिखते नहीं। भाग्यवान् को ही ये पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं।

वह जा रहा था, मार्ग में एक नदी आई। उसने विचार किया कि नाव में बैठकर नदी को शीघ्र ही पार कर लिया जायेगा। फिर घर पर पहुँचकर चिंतामणि से घर मांग लिया जावेगा।

वह नाविक से बोला, "नदी पार करने का क्या लेगा ?"

नाविक बोला "२ आना" (१२ पैसा)

परन्तु वह तो गरीब था। दो आने कैसे दे सकता था! वह नाविक से बोला कि भाई १० पैसे ले लो। मैं गरीब हूँ।

देखिये पाठक! यह सचमुच गरीब है ना! हां! हां! भाग्य से सचमुच गरीब है। चिंतामणि पास में होने से गरीबी दूर नहीं हो पाती। वह नाव में बैठा। नाव मध्य में पहुंची। उसने सोचा कि इस नाविक को दिखाऊं तो सही कि मेरे पास चिंतामणि है। इसे पता तो लगे कि मेरा नसीब कितना अच्छा है।

उसने जेब से चिंतामणि को निकाला, जैसा उसका नसीब था वैसी बुद्धि भी हो गयी। उसने जेब से चिंतामणि रत्न बाहर निकाला–उसके दुर्भाग्यसे ही तो, उसको बार–बार देखता है तथा खुश होता है। नाविक से कहता है – 'देख नाविक! मेरे पास चिंतामणि!'

नाविक दंग रह गया, ऐसा चिंतामणि तो देखा ही कभी नहीं। तुम्हे कहां से मिला?"

"अरे! शंकर भगवान् मुझ पर प्रसन्न हो गये। उन्होंने दिया है।"

वह चिन्तामणि को ऊपर नीचे करने लगा। हाथ से उछा-लने लगा। उछलते–२ वह चिन्तामणि नदी में गिर पड़ा।

"अरे! यह क्या! चिंतामणि पानी में।

नाविक! चिंतामणि पानी में गिर गया है। क्या तुम्हें नदी में गोता लगाना आता है?"

नाविक बोला, "गोता लगाना तो आता ही होगा परंतु मैं चिंतामणि नदी में से खोज कर तुम्हें क्यों दूँगा ?"

"लेकिन तुम दो आने के बदले ४ आने ले लेना। चिंतामणि निकाल दो।"

नाविक बोला "ऐसे चिंतामणि नहीं निकला करता। चला जा यहाँ से।"

बेचारा वापिस लौटा। शंकर के मंदिर में पहुंचा। पुनः उपासना की, पार्वती बोली, "परमेश्वर! तुम्हारा भक्त पुनः आया है। इसे वापिस चिंतामणि दे दो।" शंकर बोले "यदि इसके नसीब में होता तो क्या यह चिन्तामणि जो पहले दी उसे संभाल कर न रखता! इसका भाग्य ही खराब है।

नाविक के भाग्य में वह चिंतामणि था। वह पानी में कूदा, चिंतामणि को निकाला। थोड़े ही दिनों में वह अरबपति बन चुका था।

जो बहुत कुछ बनना चाहता है। परन्तु वैसा बनने के लिये कर्म नहीं करता, उसके लिए सभी द्वार बंद हैं।

क्योंकि पुरुषार्थ ही सत्कर्म बनता है। तथा उससे ही शुभ फल की प्राप्ति होती है।

कोई व्यक्ति वरदान भी दे दे। फिर भी उसके भाग्य में नहीं हो तो कुछ भी नहीं कर सकता।

एक महात्मा नें एक चूहे को पाल रखा था। एक दिन चूहे नें देखा कि बिल्ली उसे खाना चाहती है। उसने महात्मा से प्रार्थना की कि महात्मन्! परेशान हो गया हूं। चूहे की जिंदगी से बिल्ली से बहुत डर लगता है। बार बार बिल बदलता हूँ। बिल्ली से कितना बचूं!

महात्मा बोला! "क्या चाहता है?"
चूहा बोला "मुझे भी बिल्ली बना दो तो अच्छा हो।"
महात्मा बोले! "तथास्तु,"। वह बिल्ली बन गया।

२–४ दिन बीते। उसने एक दिन देखा कि उसकी ओर एक कुत्ता भागा आ रहा है। उसने सोचा कि अब क्या करुं?

बिल्ली बनकर भी सुखी नहीं। बिल्ली २–४ बार छिपी परन्तु कुत्ते ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। पहुंचा महात्मा के पास। "महात्मन्। आज तो बहुत परेशान हो गया"।

"कैसी परेशानी?"

"जी! कुत्ता मुझे मारना चाहता है। मुझे कुत्ता बना दो।" तो भय समाप्त हो जाएगा।

"तथास्तु" और वह कुत्ता बन गया। थोड़े दिन बीते। उसने देखा कि शेर आ पहुँचा है उसके पीछे।

वापिस आ पहुँचा महात्मा जी के पास।

उसने यह विचार न किया कि पुनः चूहा बनना ही अच्छा है।

वह तो *Progress* के चक्कर में था। पुनः चूहा बनकर शेर का भय तो समाप्त हो जाता। परन्तु उसने पुनः महात्मा जी से प्रार्थना की।

"महात्मा जी। मुझे बचाओ! शेर मेरे पीछे लगा है। मुझ शेर बना दो।

"तथास्तु" कृपालु महात्मा ने उसे शेर बना दिया। अब वह निर्भय होकर जंगल का राजा बन कर वन में भ्रमण करता है, उसने देखा कि एक शिकारी बंदूक लेकर जंगल मे आया है। सिंह भयभीत हो गया।

सिंह ने सोचा कि इस शिकारी को खा जाऊं, परन्तु वह सिंह था तो चूहा ही। वह कैसे साहस कर सकता था उसे खाने का।

सिंह दुम छुड़ाकर भागा। पहुंचा महात्मा के पास। "महात्मा! जंगल में एक शेर आया है। उसने बंदूक के द्वारा कई गोलियां छोड़ी। मैं डर कर भागा। महात्मा मुझे बचाइये। मुझे इंसान ही बना दीजिये" "तथास्तु........."

और वह चूहा क्रमशः इन्सान बन गया। मानव बनकर वह बोला 'महात्मा! मानव बनकर जंगल में रहना बहुत कठिन है। आपकी आज्ञा हो तो मैं शहर में चला जाऊं।"

महात्मा की आज्ञा पाकर वह शहर में जा पहुँचा। वहां छोटी सी झोंपडी बनाई। वहां उसने देखा कि एक चोर के पीछे

पुलिस भागी जा रही है। उसने सोचा कि यह आपत्ति कभी मुझ पर भी आ सकती है। पहुँचा वह महात्मा के पास।

"महात्मा! मुझे पुलिस बना दीजिए। मेरे जैसे मानव को तो पुलिस से डर लगता है।

और सच वह पुलिस वाला बन गया। अब वह डंडा लेकर चारों तरफ घूमता है। कभी किसी को भयभीत करता है। कभी किसी को धमकाता है। परन्तु एक दिन उसके पीछे इन्स्पेक्टर था। वह महात्मा के पास पहुंचा। अपनी व्यथा सुनाई। प्रार्थना की, महात्मा ने फिर दया की। वह इन्स्पेक्टर बन गया।

एक दिन राजा के आदेश के अनुसार कर्मचारी उसे रिश्वत खोरी के विरुद्ध पकड़ने चले आये। उसने सोचा कि महात्मा की ही शरण लेनी चाहिए।

उसने महात्मा से कहा 'मुझे राजा बना दीजिए।'

"तथास्तु" तूने जो दुनिया का सुख लूटना है। वह लूट ले। अभी तो तेरा नसीब अच्छा हैं।"

महात्मा की उस चूहे पर हंसी आ रही थी।

राजा बनकर वह अन्याय करने लगा, परन्तु प्रजा का ख्याल करना, हाथ में डंडा रखना, प्रजा के लिए रोज रोज मरना- यह भी एक जंजाल है। काश, मैं अभी भी एक चूहा होता, तो परेशान तो न होता।

अब वह महात्मा के पास पहुंचा। महात्मन्! राजा का पद तो अच्छा है। परन्तु जनता नहीं छोडती। पत्रकार भी अखबारों में अनेक आरोप लगाते हैं। सारा दिन प्रजा के लिए मरना मिटना पडता हैं। कई शत्रु उत्पन्न हो गये हैं। विद्रोह की पूरी सम्भावना है। अतः वापस मुझे चूहा बना दो। अच्छा रहेगा। क्यों कि शहर का जीवन मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं"

"तथास्तु........"

मानव चाहता कि मैं बहुत कुछ बन जाऊं, परन्तु उसके नसीब मे कहां है? कई बार मानव इच्छित की प्राप्ति कर लेता है। परन्तु वह उसकी स्थिति २-४ दिन की होती है। उसे उस स्थिति में सुख ग्रस्त नहीं होना चाहिये।

यदि आपके भाग्य में पैसा नहीं। आपने किसी को धोखा देकर पैसा कमाना चाहा। किसी का धन हड़प लिया। १०-२० दिन आराम से जी लो। उसके पश्चात् क्या होगा? यदि आपके नसीब में दरिद्रता लिखी है तो आराम क्या करोगे। जो कुछ भी मिला है दो चार दिन में स्वाहा हो जायेगा।

मानव कुछ बनकर धर्म ध्यान करना चाहता है। कुछ बनकर उपकार करना चाहता है। परन्तु सभी कुछ मिलने के पश्चात् अपना प्रण भूल जाता है। वास्तव में कर्म ही मानव के आगे चलता है। वह पीछे चलने का व्यसनी नहीं है। आप कहीं भी जाते है आपका भाग्य आपसे आगे ही होता है। यदि आपका ऐक्सीडेंट होता है तो उसे कौन रोक सकता है। यदि कर्म में ऐक्सीडेंट न होना लिखा हो तो कोई ऐक्सीडेंट न होगा, भले ही

ट्रेन के नीचे ही क्यों न गिर जाना पड़े। वर्तमान में आप नसीब जानने के लिये ज्योतिषी के पास में जाते हो, वह नसीब बता सकता है। नसीब खोल नहीं सकता। क्या आपके नसीब पर लगे ताले की चाबी उसके पास है? आपके नसीब को खोलने की चाबी आपकी ही जेब में है। आपने जैसा कमाया वैसा ही मिलने वाला है। ज्योतिषी वहां क्या करेगा?

ज्योतिषी आपकी स्थिति को देखकर ही ज्योतिष बताता हैं। आने वाला अमीर हैं तो वह ५०० रु. लेगा। तथा आने वाला गरीब है तो १० रु. लेगा। माना सेठ अपना नसीब जानने के लिये खुद उसके पास नहीं आता। ज्योतिषी का नसीब खोलने के लिये वहां पर आता है। ज्योतिषी के भाग्य के बिना वह सेठ वहां आ ही नहीं सकता था। ज्योतिषी भी ग्रह दशा शनि मंगल आदि देखकर उपाय बताते हैं। परन्तु ये उपाय क्या आपके नसीब को बदल सकते है? ये तो मात्र सूचना दे सकते हैं। आपको ज्योतिषी ने बताया कि आपका बृहस्पति बहुत अच्छा चल रहा हैं। आपको ५ वर्ष तक सफलता ही मिलेगी। उसने उन ग्रहों के अनुसार जाना। ग्रह मानो हमारे भाग्य का दर्पण है आपका नसीब उसमें झलकता है। आपकी रेखाएं क्या हैं?

हाथों की चन्द लकीरों का,
ये राज है सब तकदीरों का

२–४ लकीरों से फल मिलता है। बालक का जन्म होने पर आप कुंडली बनवाते हो। तब जो जैसा ग्रह होते हैं – वैसे ही उसकी कुंडली मे अंकित किये जाते हैं। मानव के कर्मानुसार

वे ग्रह भी बन जाते है। तथा कर्मानुसार ही फल देना प्रारम्भ कर देते हैं।

१६ वर्ष तक राज्य करने वाली इंदिरा गांधी की कुंडली में कोई भी ग्रह प्रथम दृष्ट्या फलदायी नजर नहीं आता है। परन्तु नवांश तथा राशि परिवर्तन के योगों ने समस्तजीवन में एक विशिष्टता की पूर्ति की।

मानव के नसीब को पढ़कर हानि का ज्ञान होता है। हानि को देखकर सावधानी कर सकते हो। परन्तु कर्म के फल से बच नहीं सकते। आपको पुरुषार्थ करना पड़ेगा। आप हानि जानने के पश्चात् *Allert* हो जायें तो सावधानी से कुछ फल से बच सकते हैं। आप उस समय स्मगलिंग – ब्लैक मार्केटिंग न करोगे क्यों कि पता है कि *Period* खराब है। कभी भी कुछ भी हो सकता है। जब *Period* खराब होता है। तभी कार्य असफल होता है। परन्तु जब समय अच्छा होता है सभी कार्य सफल होते देखे जाते हैं।

३५ वर्ष की हानि, *Bad luck* दुर्भाग्य, रोग को मिटाने का उपाय क्या आपके हाथ में नहीं हो सकता। आप भाग्य को स्वयं बदल भी सकते हो।

एक बालक का जन्म हुआ। आपने देखा कि उसके जीवन में अमुक कमियां रहने वाली हैं। आप सचेत होकर उसे ऐसा वातावरण दें कि जिससे उसकी वो कमियां दूर हो सकें। यह वास्तविकता भी है। हमारे भाग्य की चाबी हमारे हाथ में ही है। परन्तु हमें उसे प्रयोग करना नहीं आता।

वह घर का सत्यानाश करेगा, जीवन को बर्बाद करेगा। यदि आप उसे प्रारम्भ से ही सत्संगति करने का अवसर देते हैं। उसे अच्छा वातावरण तथा अच्छे मित्र देते हैं तो अवश्य ही उसके हाथ की लकीरें भी बदलनी प्रारम्भ हो जाती हैं।

ग्रह नहीं बदलते परन्तु हाथ की रेखाएं तो बदलती हैं। आपके हाथ में कोई ऐसी रेखा हो तो उसे शीघ्र ही जान लेना, जिससे उसे जल्दी ही बदला जा सके। यह कार्य कठिन अवश्य है। परन्तु पुरुषार्थ तो करना ही पड़ेगा। कर्म के द्वारा अपने दाहिने हाथ को बदला भी जा सकता है। मानव का कर्म उसके साथ है परन्तु हम उसको कुछ *Edition* तथा *Amendment* भी करते है। घड़ा सागर में भरा जाये या कुएं में, उसमें उतना ही पानी भरा जायेगा। उसकी *Capacity* काम है। मानव की भी जितनी *Capacity* होती है उसे उतना ही प्राप्त होता है।

वर्तमान में लोग सुबह ९ बजे दुकान खोलकर बैठ जाते हैं। रात्रि मे सभी दुकान को बंद कर देते है। उन्हें यह प्रतीत होता है कि दुकान सुबह जल्दी खोलने से अधिक ग्राहक दुकान पर आते हैं। उन्हें यह मालूम नहीं होता कि काम कितना भी करो मिलना उतना ही है। पाप तथा असंतोष से तो पापकर्मों का उपार्जन होता है।

पुरुषार्थ कर्मों के उद्घाटन का द्वार है। पुरुषार्थ से कर्म उद्घाटित होते हैं, परन्तु पुरुषार्थ भाग्य को बनाता नहीं है। धर्म बनाता है नए भाग्य को। जो कि इस जीवन में भी फलित हो सकता है। दूसरे जीवन में भी फलित हो सकता है। पुरुषार्थ

से नहीं, पूर्व कृत धर्म के द्वारा मानव का ऐसा भाग्योदय होता है कि विचार भी नहीं किया होता। मानव प्रकृति के चक्र में घूमते घूमते उस स्टेज पर पहुंच जाता है कि अनायास ही कार्य हो जाता है। इन्दिरा गांधी एवं संजय दोनों ४–५ वर्ष के अन्दर ही दिवंगत हो गये। अनायास ही एक युवक का क्रम प्रधानमंत्री की सीट पर लग गया। नसीब का ही तो खेल है। यहां पुरुषार्थ काम आता है क्या?

गोस्वामी तुलसी दास जी कहते हैं–

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।
जो जस करहिं सो तस फल चाखा।।

समस्त संसार में कर्म प्रधान है। जो जैसा कर्म करता हैं वैसा ही फल पाता है। धनी व्यक्ति यदि सौभाग्यशाली हो तो अवश्य ही हानि होने पर भी धनी ही रहेगा। गरीब व्यक्ति दुर्भागी हो तो वह कुछ भी कर ले गरीब ही रहेगा। गरीब व्यक्ति अनायास अमीर बन जाता है, भाग्य के योग से।

सकल पदारथ है जग मांहि
करम हीन नर पावत नाहीं।

सुकर्म करने वाले को समस्त पदार्थ उपलब्ध होते हैं जबकि कुकर्म करने वाले को कुछ भी प्राप्त नहीं हो पाता।

धर्म के द्वारा कर्मों का नाश होता है। इस प्रकार सम्पत्ति आदि की प्राप्ति होती है। धर्म भौतिक समृद्धि के लिए किया

जाये तो उसका अनन्त फल न होगा। मानव से अनायास ही सकाम कर्म हो जाता है। जिससे बहुत अच्छे नसीब का निर्माण नहीं होता।

एक बार दो मित्र एकत्र हुए। एक भाग्यवादी था, दूसरा पुरूषार्थवादी था। दोनों ही एकान्तवादी थे। किसी ने भी तत्त्व का विचार न किया था। एक बार दोनों का विवाद हो गया।

एक ने कहा कि –

"भाग्यं फलति सर्वत्र, न विद्या न च पौरूषम्।"

अर्थात भाग्य ही फलित होता है विद्या या पुरूषार्थ नहीं।

दूसरा बोला –

उद्योगिनं पुरूषसिंह मुपैति लक्ष्मीः,
दैवंहि दैवं मिति का पुरूषा वदन्ति।
दैवं निहत्य कुरू पौरूषमात्मशक्तया,
यत्ने कृते यदि न सिद्धयति कोऽत्र दोषः ।।

पुरूषार्थी पुरूष को ही लक्ष्मी प्राप्त होती है। भाग्य की बातें तो कायर पुरुष किया करते हैं। अतः भाग्य की बात को छोड़कर शक्ति के अनुसार पुरूषार्थ करो। यदि पुरूषार्थ करने पर भी न मिले तो उसमें किसका दोष है? भाग्य का भी नहीं। स्वयं का भी नहीं।"

दोनो ने एक दिन भाग्य तथा पुरूषार्थ को आजमाने

का विचार किया। उस दिन गांव में प्रीतिभोज था। सभी को वहाँ पर आने का निमंत्रण था। उन दोनों व्यक्तियों को भी निमंत्रित किया गया। दोनों ने आने की स्वीकृति दी। कुएं की मुंडेर पर बैठे - बैठे दोनों विवाद करने लगे। पुरूषार्थवादी – "आज सभी को निमंत्रण मिला हैं। गांव के बच्चे-बच्चे को भोजन मिलने वाला है। अतः मुझे वहाँ पर जाना चाहिए। वहाँ पहुँचे बिना भोजन नहीं मिलेगा। अतः मैं चलता हूँ।"

भाग्यवादी बोला – "देखो! यह बात निश्चित है कि आज जब समस्त गांव की प्रजा के भाग्य में प्रीतिभोज लिखा है तो मेंरे भी भाग्य में लिखा है। मेरे भाग्य में लिखा है तो मैं पुरुषार्थ करके वहां जाऊँ क्यों? मैं वहाँ नही जाऊँगा। यहीं पर बैठा रहूँगा जब भाग्य में लिखा है तो यहाँ बैठे मिल जायेगा। सभी लोगों ने समझाया। "भ्रातृवर! आग्रह को छोड़ दो। वहां जाने के बिना कुछ मिलेगा नहीं। तुम्हें चलना चाहिए।

वह बोला- जी नहीं! जब मेरा भाग्य मेरे साथ है तो वहां जाने से विशेष क्या होगा ?"

लोगों ने भी समझाया, परंतु वह वहीं पर बैठा रहा। २-३ घंटे बीत गये। मन से सोचा कि सभी का भाग्य अब बहुत अच्छा है कि सभी को भोजन मिलना है तो मुझे भी कहीं से कोई भोजन का डिब्बा लाकर दे देगा।"

परन्तु कोई न आया। उसे विचार आया कि आज तो गजब हो गया। क्या भूखे ही बैठना पड़ेगा ?

इतने में पुरूषार्थवादी भोजन करके वहाँ आ पहुँचा। उसने उससे पूछा "क्यों भ्रातृवर! कुछ नहीं मिला ? भोजन किया ?" भाग्यवादी बोला "हाँ मुझे अपने भाग्य पर विश्वास है, भोजन अवश्य आयेगा।"

पुरूषार्थवादी विचार में पड़ा कि यह नसीब का मारा ऐसे ही भूखा बैठा रहेगा। शाम के ५ बज गये परंतु भूखा ही बैठा रहा। पुरुषार्थवादी बोला कि देखो ! अब तो पुरुषार्थ को मानोगे ना। भाग्यवादी बोला, "दो घंटे और प्रतीक्षा करता हूँ। फिर निर्णय करूँगा।"

२ घंटे भी व्यतीत हो गये। अब वह बोला "मित्र ! मैं तेरे पुरुषार्थ को मान लेता हूँ। आप कहीं से भी मेरे भोजन की व्यवस्था करा दो। मैं क्षुधा के कारण मरा जा रहा हूँ।" पुरुषार्थी बोला "अब पुरुषार्थ को मानने से क्या लाभ ? क्यों कि पुरुषार्थ को मानने के लिये एक समय निर्धारित है। जब वह समय निकल जाये तो भाग्य को ही मानना पड़ता है। तूने २ घंटे पूर्व पुरुषार्थ को माना होता तो सम्भवतः पुरुषार्थ से भोजन मिल जाता। परन्तु अब तो बहुत लेट हो चुका है। अब तो तुझे भूखा रहना ही पड़ेगा। अब तो तेरे भाग्य का ही दोष है। अब आगे से भाग्य को ही मानना। अब मैं भी भाग्य में विश्वास करता हूँ। तेरी दशा को देखकर"। वास्तव में दोनों की आवश्यकता है, भाग्य की, पुरुषार्थ की भी।

परन्तु पुरूषार्थवादी को पुरुषार्थ का फल न मिलने पर निराश न होना चाहिये। तथा भाग्य वादी को भाग्य के भरोसे पर

ही नहीं बैठें रहना चाहिये।

यदि पुरुषार्थ करने पर भी कुछ न मिले तो समझना चाहिये कि उसके निकाचित पापकर्म का उदय है। इसी कारण से कार्य करने पर भी सिद्धि प्राप्ति नहीं हो रही।

भाग्य ही पुरुषार्थ भी कराता है। पुरुषार्थ उतना ही होता है, जितना मनुष्य के भाग्य में लिखा होता है। घड़ा अपनी योग्यता से अधिक पानी नहीं भर सकता है।

उस भाग्यवादी के तो कर्म ही फूटे थे। तो भोजन कहाँ से मिल सकता था। भोजन के लिए पुरुषार्थ भी कैसे हो सकता था।

भाग्य के ही अनुसार मानव को सभी कुछ प्राप्त होता है। बुद्धि की निर्मलता भी भाग्य से ही मिलती है। 'विनाशकाले विपरीत बुद्धि' विनाश का समय आने पर बुद्धि भी विपरीत होती है।

रावण का विनाश काल आ पहुँचा था। उसे सीता के अपहरण करने की बुद्धि सूझी। अंत समय तक भी उसने सीता को नहीं छोड़ा।

कौरवों का पतन होने वाला था अतः पांडवों को दुर्योधन विना युद्ध के एक इंच भी जमीन देने से इन्कार कर दिया। परिणामतः कौरवों को प्राणों से भी भ्रष्ट होना पड़ा। पांडवों तथा नल का जब समय खराब आया तो उन्हें जुआ खेलने

की सूझी तथा वनवास जाना पड़ा। राम को सीता का वियोग होना ही था अतएव धोबी की बातों में आकर सीता का परित्याग किया। बाद में पश्चात्ताप करना पड़ा।

धवल सेठ के पाप का घड़ा भर चुका था। अतएव वह श्रीपाल को सातवीं मंजिल तक मारने के लिये चढ़ने लगा, परन्तु वही गिरकर अपनी स्वयं की ही छुरी से मरकर नरक में गया।

राम का भाग्य रूठा था, तभी तो राज्यपद के बदले वनवास मिला। दुःखी होना पड़ा।

भगवान् ऋषभदेव ने पूर्व जन्म में बैल के मुंह पर जाली बांधकर उसे खाने में अन्तराय किया था। परिणामतः उन्हें ऋषभदेव के भव में ४०० दिन तक शुद्ध अन्न जल, न मिल पाया। श्रमण भगवान् महावीर ने शय्यापालक के कानों में पिघला हुआ शीशा डालकर उसे मार दिया था, परिणामतः महावीर के भव में उन्हें कानों में कीले ठुकवाने पड़े। त्रिपृष्ट के भव में महावीर ने सिंह को मारा था। अतः नरक में चले जाने पर भी उनके कर्मों का क्षय न हुआ। वे महावीर के भव में किसान के द्वेष के भजन बने।

कुलमद किया था महावीर ने मरीचि के भव में, तो महावीर बनने से पूर्व उन्हे भिक्षुक ब्राह्मण कुल में अवत्तरित होना पड़ा। (जैन दर्शन में ब्राह्मण कुल को नीच कुल कहा गया है। संभवतः उसकी भिक्षा वृत्ति के कारण कहा गया होगा। वैसे तो जैन दर्शन नीच उच्च को मानता ही नहीं है)

मुनि के साथ जुगुत्सा करने से नागश्री का पतन हुआ। मुनि को कडवा तुंबड़ा देने से नाग श्री नरक में गयी। पौषध में स्थित अपने पति प्रदेशी सम्राट् को विष देने से सुर्यकांता छठी नरक में गई। भगवान् पार्श्वनाथ मरुभूति के भव में अपने भाई का अपमान करने से अनेक जन्मों में मृत्यु को प्राप्त हुआ। इससे यह घटत होता है कि पाप को मिटाने के लिए कोई पापकर्म नहीं करना चाहीये। किसी को दुःखी या अपमानित नहीं करना चाहिये। किसी को दुःखी या अपमानित करने से कर्मों का ही बंध होता है।

हिंसा व रौद्र विचारों से काल सौकरिक कसाई को सातवीं नरक में जाना पड़ा।

मम्मण सेठ अति परिग्रह से नरक में गया।

श्रेणिक महाराजा को पूर्व बद्धनरकायु से भगवान् महावीर भी न बचा सके। कर्मों से कोई भी सुरक्षित नहीं हो सकता है। क्या नंदी षेण पतित होने के मोहनीय कर्म से बच पाये।

मानव कर्मों का भोग करते समय रोता है। क्यों नहीं वह पाप कर्म करते समय विचार करता! मानव सुख भोगते समय कर्म की विविधता को भूल जाता है, परंन्तु दुःख भोगते समय व्याकुल होता है। चोर चोरी करते समय फल का विचार नहीं करता, परंतु बाद में २-४ वर्ष तक जेल में कैद रहता है।

हत्यारा हत्या के समय परिणाम नहीं देखता, अन्त में उसे फांसी के तखते पर लटका दिया जाता हैं। पाप का

फल निश्चित है। कतिपय लोगों के बालक युवावस्था में मृत्यु को प्राप्त करते हैं। उनका भी यह कर्म फल ही है।

रुक्मिणी ने १६ घटी तक मयूरी के अंडों को मयूरी से अलग रखा था। अतः १६ वर्ष तक उसका पुत्र प्रद्युम्न उसकी नजरों से ओझल रहा।

किसी के बालक जन्म लेते ही मर जाते हैं। मैंने एक ऐसा व्यक्ति देखा है जिसके सात पुत्र हुए परंतु सभी जन्म लेते ही मर गए। यह पूर्वकृत कर्मों का फल नहीं तो और क्या है?

सगर चक्रवर्ती के समस्त पुत्रों का एक ही समय में नाश हुआ। यह सब स्वकृत कर्मों का फल है।

आचार्य हेमचंद्रसूरिजी ने वीतराग स्तोत्र में स्पष्ट लिखा है–

जीव! तवैव दोषोऽयं निजप्राक्कृत कर्मणः।
नाकृतं भुज्यते कर्म, कृतं भुज्यत एव हि॥

हे ज़ीव! यह दुःख तेरे ही पूर्वजन्म में कृत कर्मों का फल है। अकृत- न किया हुआ कर्म- कभी फल नहीं देता। कृत का ही फलविपाक होता है।

केवलज्ञान के पश्चात् तीर्थंकर को अशाता- वेदनीय का प्रायः उदय नहीं होता। वे मात्र साता (सुख) वेदनीय का ही वेदन करते है। परंतु भगवान् महावीर को गोशाला की तेजो लेश्या से ६ मास तक असुख का वेदन करना पड़ा। अवश्य ही

केवलज्ञान के पश्चात् भी महावीर का कोई वेदनीय कर्म शेष रह गया होगा जिसका अबाधाकाल अभी समाप्त न हुआ होगा जो कि केवलज्ञान के १४ वर्ष के पश्चात् उदय में आया।

तंदुल मत्स्य मानसिक हिंसा से सातवीं नरक में गया।

कर्म की गति न्यारी है। मानव धन, पुत्रादि के मोह में पागल बन जाता हैं, तब धन सुखंकर तथा शुभंकर तो प्रतीत होता है ना?

धन की रक्षा करते करते मर जाना पड़े तो धन ने सुखी किया या दुःखी ?

२-४ पुत्र होने पर भी पुत्र का सुख न हो तो पुत्रों से क्या लाभ!

कोणिक जैसा सत्त्वशाली पुत्र होने पर भी क्या श्रेणिक पुत्र के कारण मृत्यु को प्राप्त नहीं हुए? ऐसे पुत्र से तो पुत्र का न होना अच्छा!

धन पुण्य से मिल सकता है परंतु धन का भोग तथा दान बिना पुण्य के नहीं मिल सकता है।

अग्निशर्मा ने ९ जन्मों तक गुणसेन (समरादित्य केवली के जीव) को तथा कमठ ने पार्श्वनाथ को १० भव तक कष्ट दिया था। क्या वे अपने कर्मों का फल नहीं पाएंगे ?

असंख्य जन्मों तक ऐसे कर्मों का फल भोगना पड़ता है।

जैसे पाप का फल मानव को अवश्य मिलता है। तथैव

पुण्य का फल भी मानव को अवश्य मिलता है।

संगम ने सुपात्रदान दिया और उसे शालिभद्र के भव में कितनी ऋद्धि प्राप्त हुई !

बाहुबलि ने श्रमणों की सेवा कि तो उसे बाहु का बल चक्रवर्ती से भी अधिक मिला।

कमठ की वैरवृत्ति के विपरीत पार्श्वनाथ ने समता रखी तो उन्हें मोक्ष की प्राप्ति हुई।

श्रमण या महावीर ने रागद्वेष नहीं किया, तो नए कर्मों का बंधन नहीं किया तथा केवलज्ञान को प्राप्त किया।

अनेक राजा करुणावतार बनकर स्वर्ग में गए।

अनेक महामुनि संयम का पालन करके अनुत्तरवासी बने।

सिद्धचक्र की साधना से श्रीपाल अपूर्व ऋद्धिके स्वामी बने।

कर्म का फल तो मानव को मिलता ही है। मानव कर्म के फल से मुक्त होने का प्रयत्न न करे, कर्म से ही मुक्त होने का प्रयत्न करे।

मानव को सुकुल, अच्छे भाग्य से प्राप्त होता है। परंतु बाद में वह यदि दुराचरण से अपने कुल को दूषित करे तो उसमें उसी का दोष है।

मानव को सद्‌बुद्धि अच्छे भाग्य से प्राप्त होती है। परंतु

यदि मानव सद्बुद्धि को सदुपयोग न करे तो उसके ही कर्तव्य का दोष है।

मानव को धन, बुद्धि, कुल, परिवार आदि अच्छे कर्मों से प्राप्त होता है परंतु उसको अच्छा बुरा बनाना मानव के अपने हाथ में है।

यदि मानव स्वयं पापकर्म करे तथा तत्पश्चात् अप्रतिष्ठा को प्राप्त करे तो क्या वह उसी व्यक्ति का दोष नहीं ?

कर्म की गति बहुत विचित्र है। कर्म तीर्थंकर जैसे व्यक्ति के साथ भी पूर्ण प्रतिशोध लेता है। वह किसी को भी क्षमा नहीं करता। कर्म के राज्य में गरीब अमीर का, राजा या रंक का कोई भेदभाव नहीं। वह तो मानो वीतराग सा होकर सभी पर समभाव (समान भाव) रखता है।

कर्म का फल मानव को कम से कम १० गुणा मिलता है। यदि वह कर्म अत्यंत रसोद्रेक से किया हो तो वह हजारो, लाखों गुणा फल भी देता है।

कर्मण की गति न्यारी –

कर्म की गति विचित्र है। कभी कर्म मानव को नरक की पीड़ा देता है। कभी मानव का नाच नचाता है कभी तिर्यंच योनि में पटकाता है तो कभी दिव्यसुखों की ओर भेज देता है। कर्म का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसकी गति समस्त लोक में है। कर्म जड़ है फिर भी चेतन आत्मा को जकड़कर रखने में अनादि-काल से दक्ष है।

मानव को चिंतित वस्तु की प्राप्ति नहीं हो पाती। यह कर्म की विचित्रता है।

वास्तव में मानव जल में जितना नमक डालता है जल उतना ही खारा होता है। जितनी ही खांड़ डाली जाती है उतना ही मीठा हो जाता है। जितना भी शुभाशुभ भावों से पाप या धर्म किया जाता है। उतना ही तीव्र उसका कर्मोदय होता है।

एक व्यक्ति जंगल में से गुजर रहा था। उसने जंगल में देखा कि एक रीछ चला आ रहा है। उसने सोचा कि रीछ मुझे मार देगा। वह भयभीत हो गया।

रींछ का स्वभाव है कि वह मानव को जीता जागता देख-कर ही खाता है। वह मरे हुए प्राणी को नहीं खाता।

उसने व्याकुल होकर विचार किया कि रीछ का मुकाबला करना तो अत्यंत कठिन है।

तभी उसको एक विचार आया कि रीछ के सामने मृतप्राय: होकर लेट जाना चाहिए तब वह रीछ सूंघ कर चला जायेगा। उसने यही किया।

वह जमीन पर लेट गया। उसने श्वास बंद कर लिया। तथा शरीर को वहीं ढीला छोड़ दिया। मानो वह मृत प्रायः हो चुका था।

रीछ वहां आया। उसने देखा कि एक आदमी वहाँ लेटा

हुआ है। उसने सोचा कि पहले जान लिया जाय कि आदमी जीवित है या मृत है। उसने देखा कि आदमी मृत सा लगता है। वह परीक्षा लेता रहा। उस आदमी का रूका हुआ श्वास कब तक रूका रहता ! अब उसने सोचा कि श्वास लूंगा तो रीछ खा जायेगा।

रीछ भी सोचने लगा कि यह आदमी मरने का ढोंग कर रहा लगता है। यदि यह मरा हुआ होगा तो यह उठेगा ही नहीं। अन्यथा थोड़े समय में अवश्य उठेगा। अब वह रीछ भी थोड़ा दूर खड़ा हो गया।

अब उसने सोचा कि रीछ ने कानों को मेरे हृदय से लगाया था। शायद उसने मेरे हृदय की धड़कन को सुन लिया हो।

आधे घंटे के पश्चात् वह उठा परन्तु तुरन्त रीछ उस आदमी को खाने के लिए भागा।

यमराज के समान रीछ को देखकर वह सोचने लगा कि अब सुरक्षा नहीं हो सकेगी।

अकस्मात् उसे एक विचार आया कि रीछ के दोनों कान पकड़ लेनें से उसकी शक्ति क्षीण हो जाती है। उसने तुरन्त रीछ के दोनों कानों को पकड़ लिया तथा मसलना प्रारम्भ कर दिया उसने इस क्रिया का चमत्कार भी देखा। रीछ की शक्ति कम हो चुकी थी।

रीछ ने बहुत प्रयास किया उस आदमी से स्वयं को छुड़ाने का परंतु वह सफल न हो सका।

रीछ के साथ युद्धकरते हुए उछलते कूदते उस व्यक्ति की जेब में से एक चांदी का सिक्का नीचे गिर गया। वह व्यक्ति सिक्का अब कैसे उठाये ! कोई उपाय नहीं मिल रहा था।

इतने में उसे एक राही वहाँ आता दिखाई दिया। उसने सोचा क्यों न उसी व्यक्ति को रीछ के कान पकड़ा दिये जायें।

वह व्यक्ति रीछ तथा मानव की लड़ाई देख रहा था। वह थोड़ा नजदीक आया और पूछा कि दोस्त! यह क्या हो रहा है?

वह बोला "अरे! यह विशेष रीछ है। इसके कानों को मसलने पर चांदी के रुपये नीचे गिरते हैं। मैं काफी चांदी के रुपये जेब में डाल चुका हूँ। देखो एक रुपया और गिर पड़ा है।"

उसे विश्वास हो गया।

वह बोला "दोस्त मुझे भी रीछ के कान पकड़ा दो; परंतु उसने कान पकड़ाने से स्पष्ट इंकार कर दिया। मना करने पर उसकी रुचि और बढी।

अन्तत: वह व्यक्ति नवागंतुक को रीछ के कान पकड़ाकर, अपना चांदी का रूपया उठाकर चलता बना।

अब वह रीछ के कानों को जोर से दबाने लगा, परंतु उससे चांदी का रुपया न मिला। अकस्मात् उछलते-उछलते वहाँ उसकी जेब से तांबे का रुपया नीचे गिर गया।

वह समझ चुका था कि रुपया कहां से आया था। अब उसे स्वयं के ठगे जाने पर शोक था। रात्रि का अन्धंकार होते वह व्यक्ति भी अपना तांबे का रुपया लेकर भाग खड़ा हुआ।

भाग्यशालियो! जिसकी जेब में जैसा रुपया था वैसा ही नीचे पड़ने वाला था। अन्य किसी स्थान से रुपया आ नहीं सकता था।

आपने ने भी अपनी भाग्यरूपी जेब में जैसा सुख, वैभव, ऐश्वर्य डाला है, वैसा ही आपको मिलने वाला है।

विक्रम भाग्यशाली था। योगी के द्वारा स्वर्ण पुरुष के प्राप्ति के लिये विक्रम का वध करने का प्रयास किया गया, परन्तु अन्ततः योगी ही अग्निकुंड में गिर पड़ा तथा स्वर्ण पुरुष योगी को न मिल कर विक्रम को मिला। यह भाग्य की ही कथा है।

भाग्य से ही कुल परिवार तथा रूपयों का सुख मिलता है। अन्यथा सभी कुछ समाप्त होते हुए देर न लगे।

कई बार एक पुरुष के कारण कंपनी चलती है। वह व्यक्ति कंपनी से निकल जाये तो कम्पनी फेल हो सकती है।

कई बार बस में बैठा एक ही व्यक्ति सारी बस को बचा लेता है। स्वतः बस में से उतर जाये तो बस भी किसी गर्त में पड़ सकती है।

भाग्य प्रबल हो तो राजा को लात मारने पर भी ईनाम मिल सकता है।

जबकि भाग्य रूठ जाये तो सुवर्ण मोहरों का ढेर भी कोयला बन जाता है।

एक पंडित ने एक ट्रेन में बैठे हुए कुछ लोगों के हाथ देखे उसे लगा इस समय सभी के हाथ में दुर्घटना का योग हैं। वह उतरा तथा दूसरे डिब्बे में जाकर बैठ गया और तुरन्त ही पहले डिब्बे में आग लग गयी। पुरुषार्थ से वह बच गया। पाणिने ने स्वयं की विद्यारेखा को न देखकर छुरी से ही हाथ में विद्यारेखा का निर्माण कर लिया था। फलतः वह एक महान् विद्वान् बन गया। इस प्रकार पुरुषार्थ की महत्ता भाग्य के निर्माण में कम नहीं है। एक कवि काव्य के अनुसार–

Fortune favours those who do there duty well.

जो दायित्व तथा कर्तव्य का सम्यक् पालन करते है–

भाग्य उन्हीं का पक्ष करता है।

अतः आज ही अपने भाग्य के निर्माण में लग जाओ। पूव कर्मों का – पूर्व भाग्य का – फल तो मिलेगा ही। परन्तु अशुभ के निवारण के लिये नवीन शुभ कर्मों का अर्जन करो। अन्यथा पुण्य का क्षय होने पर तो देवताओं को भी तिर्यंच में जाना पड़ता हैं। मानव की क्या गति होगी? यह स्वयं विचार किया जा सकता है। एक कवि के अनुसार –

Today is ready to your hand,
But who tommorrow can command.

आज का काम कल पर न छोडने वाला ही सुखी हो सकता है। अतः विचित्र कर्मों की गति को जानकर अपने वर्तमान के कर्मों का सुधार लेना चाहिये।